International Indexed & Referred Research Journal, March, 2012. ISSN- 0975-3486, RNI-RAJBIL 2009/30097;VoL.III *ISSUE-30

शोध पत्र–अर्थशास्त्र

खुदरा बाजार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के दष्प्रभाव

* डॉ. राजरानी खुराना

* सहा. प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, शा. महाविद्यालय, सुजालपुर (म.प्र.)

March, 2012

पिछले काफी समय से देश में एक शब्द चर्चित रहा है एफ.डी. आई. (**F.D.I.**) एफ.डी.आई. अर्थात् प्रत्यक्ष विदेशी निवेश या .Foreign Direct investment. प्रत्यक्ष विदेशी निवेश किसी देश की अर्थव्यवस्था के लिये कोई अपरिचित नहीं है। वैश्वीकरण और उदारीकरण की अर्थव्यवस्था के दौर में और भारत जैसे मिश्रित अर्थव्यवस्था वाले देश के लिये यह विकास की रफ्तार पाने का विशेष माध्यम बन जाता है किन्तु प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को किसी देश में अपनाये जाने के संदर्भ में एक विशिष्ट विवेक पूर्ण नीति की आवश्यकता होती है जिसके द्वारा देश को आत्मनिर्भर बनाते हुये ही विदेशी पूंजी को अपनाया जाता है अन्यथा देश को आर्थिक पराधीनता का भी सामना करना पड़ सकता है। इसी कारण भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश लागू किये जाने पर बड़ी बहस ने जन्म लिया है।

ऐसा नहीं है कि देश के विभिन्न आर्थिक उपक्रमों में यह लागू नहीं है किन्तु खुदरा व्यापार अर्थात वस्तु की थोक प्राप्ति और बिक्री के पूरे तंत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को खोलने पर बड़ी बहस ने जन्म लिया क्योंकि यह क्षेत्र देश की आधारभूत संरचना से जुड़ा हुआ क्षेत्र है।

खुदरा व्यापार एक ऐसा तंत्र है जिसमें छोटे व्यापारी या दुकानदार एक बड़े थोक विक्रेता या विक्रय केन्द्र से काफी मात्रा में सामान लाकर आम उपभोक्ता तक पहुंचाते हैं जिससे वे अपना मुनाफा जोड़कर बिक्री करते हैं। इस तरह हर प्रकार के उपभोक्ता को उचित मात्रा में सामान उपलब्ध हो जाता है और उसे थोड़े से सामान के लिये बड़ी दुकानों के चक्कर नहीं लगाने होते हैं। ये थोक विक्रय केन्द्र रोजगार के सबसे बड़े माध्यमों में से एक हैं।

वास्तव में भारतीय समाज का एक संपूर्ण वर्ग ही इस कार्य में जुड़ा हुआ है और सदा से जुडा रहा है इस तरह समाज के एक चौथाई वर्ग को तो यह क्षेत्र रोजगार देता ही है साथ ही शिक्षित बेरोजगारों को भी नए उद्यमों के लिये प्रेरित करता है। देश के सकल घरेलू उत्पाद में रिटेल क्षेत्र की भागीदारी दस प्रतिशत लगभग है। जबकि यह 8 फीसदी रोजगार देने में सक्षम है। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2010 तक देश का संगठित रिटेल क्षेत्र 22 अरब डॉलर को पार कर गया है कुल मिलाकर यह देश की आधारभूत अर्थव्यवस्था की एक अहम कड़ी है। आज के दौर में इस के अंतर्गत F.D.I. की स्वीकार्यता के ऊपर काफी समय से विवाद चल रहा है। वर्तमान सरकार इसके प्रति कुछ ज्यादा ही लालयित नजर आती है जबकि सर्वप्रथम इसी ने इसका विरोध किया था किन्तु सरकार के वर्तमान प्रयासों से सिंगल ब्रांड रिटेल मार्केट में अब 100 प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और मल्टी ब्रांड मार्केट में 51 प्रतिशत विदेशी निवेश को मंजूरी मिल चुकी है। सारे खतरों और विरोधों को नकारते हुये वर्तमान सरकार ने रिटेल मार्केट में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को लाकर स्वदेशी व्यापारियों के अस्तित्व को संकट में डाल दिया है।

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को इस प्रकार लाने के पीछे सरकार ने देश के उपभोक्ताओं की सुविधा का दावा किया है। सरकार की ओर से दी गई दलीलों में उपभोक्ताओं को प्रतिस्पर्धा के कारण अच्छे उत्पाद, उचित दाम के उत्पाद और विकल्पों की अधिकता को बताया है साथ ही उसकी दृष्टि में यह प्रयास रोजगारों को बढ़ाने वाला होगा इससे देश की आधारभूत संरचना और विकास को बल मिलेगा अर्थात् सरकार की नजर में थोक बाजार में विदेशी प्रवेश से देश का विकास होगा। सरकार की दृष्टि से थोक बाजार की श्रृंखला में लगे विचौलियों की मनमानी से ग्राहकों को आजादी मिलेगी हमें इन्हीं भुलावों के पीछे की सच्चाई को स्पष्ट करना चाहिये।

सरकार का प्रथम दावा कि यह उपभोक्ताओं के हित में है बिल्कुल खोखला है, दरअसल विदेशी संपन्न कंपनियाँ मध्यमवर्गीय और क्रयशक्ति सम्पन्न वर्ग को लक्ष्य मानकर उत्पाद उपलब्ध कराती है जबकि आम व्यक्ति की आवश्यक वस्तुऐं जैसे किसान मजदूर की वस्तुऐं आदि अपने केन्द्रों पर नहीं रखती हैं और यदि वे साधारण स्तर की वस्तुओं को बिक्री हेतु रखें तो वे स्वतः ही मंहगे उत्पादों के साथ महंगी बेची जायेंगी। जैसे 2 रू. किलो खरीदा आलू यदि बड़ी मार्केटनुमा दुकान में 50 रू. ली. दूध के साथ रखकर बेचा जाये तो वह 25 रू किलो ही बेचा जायेगा अन्यथा उस दुकान की कीमत कम हो जायेगी। कहने का अर्थ है कि दैनिक उपभोग की वस्तु यदि आलीशान दुकान में बिकेगी तो स्वतः ही महंगी होगी क्योंकि उसमें प्रदर्शन पर लगा शुल्क भी जोड़ा जायेगा। की 75 प्रतिशत से भी अधिक आबादी वास्तविक गरीबी में जीवन

यापन करती है। वर्ष 2008 में प्रस्तुत अर्जुन सेन गुप्ता कमेटी की रिपोर्ट ने उजागर किया है कि देश की 77 फीसदी आबादी 20 रू. प्रतिदिन से भी कम आमदनी पर जीती है। आज वर्तमान में हमारा देश भुखमरी से जूझ रहा है। ''ग्लोबल हंगर इंडैक्स में भारत का 67वां स्थान है। इसकी गंभीरता इसी से है कि इस सूची में भारत श्रीलंका (36) और पाकिस्तान (59) से भी पीछे है।''[1]

एक ऐसे देश में जहाँ की 80 प्रतिशत आबादी पेट भरने को भी मोहताज है वहाँ विदेश धन की बड़ी दुकानें मध्यमवर्गीय को भी जबरन उच्च वर्ग की जीवन शैली अपनाने को विवश करती है और जब साधारण वेतन वाला व्यक्ति स्वयं को इस बाजार के लायक नहीं पाता है तो वह दूसरों का शोषण अर्थात् भ्रष्टाचार करता है, देश की खराब नीतियों के कारण वह काला धन भी विदेशी बैंकों में चला जाता है और उसी धन से सम्पन्न विदेशी कंपनियां भारत में सस्ते श्रम और संसाधन लेकर अपने उद्यम लगाती हैं, इस तरह शोषण में आम भारतीय ही पिसता है।

इस परिस्थिति में जहाँ भारतीय मुद्रा में लगे भारतीय उद्यमी विदेशी मुद्रा के व्यवसायियों से प्रतिस्पर्धा में आते हैं तो उन्हें मुद्रा असंतुलन का सामना करना पड़ता है। अर्थात् बहुराष्ट्रीय कंपनियों का मुद्रा मान अमरीकी डॉलर में ही रखा जाता है वहां जब वे 1 डॉलर भारत में निवेश करते हैं तो यहां आकर 50 रू. में परिवर्तित हो जाता है अर्थात वे भारतीय उद्यमियों से 50 गुना संसाधन लगाकर उनके रोजगार को समाप्त कर देते हैं इस तरह जब तक मैराथन धावक विश्व चैंम्पियन फर्राटा धावक और एक अपाहिज की दोड़ होगी तो विजेता का फैसला तो निश्चित ही है। विदेशी पूंजी से संचालित रिटेल विक्रेता सर्वप्रथम स्वदेशी विक्रेताओं के बाजार को खत्म करता है। आज जिसे सरकार विचौलिया कह रही है वे वही शिक्षित युवा हैं जिन्हें वह रोजगार नहीं देती है देश के लाखों किसानों की आत्महत्या का कारण यही है कि उन्हें महंगें दामों पर साधन जुटाना पड़ते हैं और उनकी कृषि की कोई सुरक्षा नहीं है।

रोजगार उत्पन्न करने का जब तर्क दिया जाता है तो सरकारें यह भूल जाती हैं कि एक संम्पन्न व्यवसायी अपने बाजार को बढ़ाने के लिये छोटे उद्यमियों को या समाप्त कर देता है या स्वयं के अधीन सेवक बना लेता है। जैसे जब जूता बनाने वाली एक विदेशी कंपनी के भारत आगमन पर समूचा एक वर्ग ही वेरोजगार हो गया आज एक जूता बनाने वाला पारंपरिक शिल्पकार सिर्फ जूता सीने या पॉलिश करने वाला रह गया है। वह भी लाखों में एक उपभोक्ता पाने वाला। यही स्थिति साबुन व्यवसाय की है जहाँ कभी आगरा से मेरठ के बीच ही बीस हजार लघु उद्योग साबुन बनाते थे और लाखों रोजगार पूरे भारत में साबुन उद्योग से था वह विदेशी कंपनियों के सुरसा मुख में समा गया। आज एक भारतीय विदेशी उत्पाद ही सही उन्हें बेचकर रोजगार का एक अंश प्राप्त कर सकता था किन्तु रिटेल मार्केट में विदेशी पूंजी से यह भी समाप्त होने वाला है। एक पूरी श्रृंखला जो आधारभूत संरचना के अभाव में रह रहे भारत के लोगों की समस्त आवश्यकताओं की आपूर्ति करती थी वह भी समाप्त होने के कगार पर है । इस तरह उपभोक्ता वर्ग और आम भारतीय को पूरी तरह बेरोजगार जब बना दिया जायेगा तो उन दुकानों का सामन खरीदेगा कौन ? फिर हमें ऐसे संगमरमर के महलों की क्या आवश्यकता है ?

अब बात आती है उत्पादक की तो सबसे बड़ा उत्पादक है किसान और किसान जब अपना माल बेचता है तो उसके पास सरकारी गोदामों के अतिरिक्त कई थोक विक्रेता भी उपलब्ध होते हैं किन्तु स्वदेशी थोक विक्रेताओं के अभाव में किसान को जब मजदूरी में विदेशी कंपनियों के रिटेल मार्केट में इसे बेचना होगा तब उसके माल की गुणवत्ता आदि किसी भी बहाने से मनमाने दामों पर उसे खरीदा जायेगा।

यह भी होगा कि ये कंपनियाँ मजबूर करके स्वयं के द्वारा उत्पन्न बीज से ही उत्पन्न फसल को खरीदें तो उसे बीज भी मंहगे दाम पर खरीदना होगा जैसा कि हम आज बीटी कपास, ट्रांसजैनिक फसलें, उत्पादन योग्य बनाने वाली चाबी नुमा रसायन या उर्वरकों आदि के संदर्भ में देखते हैं नतीजतन देश के किसान को भी इनसे लाभ की संभावना नहीं है। एक बड़े मुनाफे के चलते ये बड़ी दुकानें या तो मंहगे दामों पर वस्तु खरीदने वालों को ही गुणवत्ता प्रदान करेंगी अथवा खाद्य सामग्री सब्जियाँ आदि को चोरी छिपे या प्रकट रूप में सम्पन्न देशों में भेजेंगी तो खाद्य संकट उत्पन्न होगा।

रही बात खाद्यान्न उत्पादन योग्य भूमि की तो हम कई वर्षों से भूमि अधिग्रहण की लूट देख रहे हैं पश्चिमी उत्तरप्रदेश दिल्ली हरियाणा में किसानों का आक्रोश देखा जा सकता है जहाँ भ्रष्टाचार द्वारा पूंजीपति शक्तियों ने विकास के नाम पर कौड़ियों के मोल उर्वर भूमि छीन ली है भट्टा पारसौल के हत्याकांड पुराने नहीं है। सिंगूर विवाद भुलाया नहीं गया है, भूमाफिया आवास का प्रलोभन देकर भारतीयों को चुप करा अवश्य रहे हैं। किन्तु यह जमीन सीधे विदेशी व्यवसायियों को विग मार्केट के लिये दी जाने वाली है खाद्यान्न के लिये भूमि ही नहीं रहेगी तो गेंहूं का गोदाम उत्तरप्रदेश में नष्ट हो जायेगा।

प्रश्न यह बात का है कि जिस देश में अधिकांश व्यक्ति गरीब है वहाँ इन दुकानों के पीछे कंपनियां लालयित क्यों हैं इसका सीधा उत्तर यह है कि भारत का साधन सम्पन्न वर्ग, क्रय शक्ति युक्त उपभोक्ता भले ही बहुत कम हो किंतु इतनी बड़ी आबादी पूरे यूरोप और विकसित देशों के व्यापार

का आधार है अर्थात इन कंपिनियों का लक्ष्य आम भारतीय है ही नहीं जिनके लाभ की दुहाई सरकार दे रही है अर्थात् सत्ता पाकर स्वार्थी लोगों ने विदेशी निवेश के नाम पर देश को बेचने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। हम आज अपने देश अपनी जमीन अपनी अगली पीढ़ी का भविष्य इन नेताओं पर नहीं छोड़ सकते हैं !

अंत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से विकास की जो दुहाई दी जा रही है उसकी सच्चाई भी जान लें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से बालमार्ट जैसी कंपनियाँ व्यापार पर एकाधिकार कर लेती हैं। बालमार्ट के इसी प्रभाव से आज सर्वाधिक विकसित अमेरिका भी संकटों से जूझ रहा है इसी संदर्भ में एक शोधपत्र में हेमा स्वामीनाथन और स्टीफान ए ने निष्कर्ष निकाला है कि ''बाल मार्ट के स्टोर स्थानीय उद्यमियों तथा सामुदायिक कारोबारियों को बाजार से बाहर कर देते हैं।''[2]

''चीन द. कोरिया, मलेशिया, सिंगापुर, ताइवान, थाईलैंड आदि देशों में जहाँ बहुराष्ट्रीय खुदरा व्यपारियों को काम करने की छूट दी गई वहां सुपर मार्केटों की संख्या में बढ़ोत्तरी के साथ अपरिहार्य रूप से परंपरागत परचून की दुकानों की संख्या घटती गई और सामाजिक दृष्टि से जिसके खराब ही परिणाम निकले है।''[3]

आधारभूत संरचना के अभाव से जूझ रहे देश के लिये ऐसा कदम मारक हो सकता है अतः देश की जिम्मेदारी रखने वाले राजनेताओं को इस कदम को वापस लेना चाहिये। रिटेल मार्केट में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को रोककर स्थानीय उद्यमियों को बढ़ावा दिया जाना चाहिये।

सभी दृष्टियों से रिटेल मार्केट में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश घातक है जिसे रोका जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ

1. ग्लोबल हंगर इंडैक्स– 2011 (IFRRI) इंटरनेशनल फूल पॉलिसी एंड रिसर्च इंस्टीट्यूट 2. 1–3 अगस्त 2004 में अमेरिकन एग्रीकल्चरल इकोनोमिक्स एसोसियेशन की वार्षिक बैठक में प्रस्तुत पत्र 3. एसी नियेल्सन द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट 2003